

लौटते समय

जगन्नाथ प्रसाद दास

पिछले कुछ समय से हिन्दी में समकालीन उड़िया कविता के प्रति एक ख़ास तरह की दिलचस्पी पैदा हुई है। इस बीच अनेक प्रतिष्ठित तथा कुछ नये उड़िया कवियों की कवितायें अनूदित होकर हिन्दी में प्रकाशित हुई हैं और उन्होंने अपनी विशिष्ट वर्णच्छटा और आस्वाद के कारण हिन्दी के कविता प्रेमियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। जगन्नाथप्रसाद दास का नाम ऐसे ही बहुचर्चित उड़िया कवियों में से एक है, जिनसे हिन्दी का पाठक अपरिचित नहीं है।

लौटते समय नाम की अपनी एक सार्थकता है। इस संग्रह की कवितायें शब्द और मौन के बीच एक निरंतर आवाजाही के तनाव से पैदा हुई हैं। अधिकांश कवितायें एक ध्वनि-बिम्ब या हरकत से शुरू होती हैं और एक गहरे मौन में पर्यवसित हो जाती हैं।

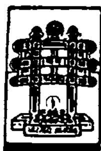
इन कविताओं की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि वे जड़ों से कटी हुई कवितायें नहीं हैं। इस संग्रह का कवि जड़ों से गहरी संसक्ति और आधुनिकता के बीच कोई विरोध नहीं देखता। अधिकतर कविताओं में एक संस्कारी मानस की ऐसी भावमयी तथा चिन्तापरक प्रतिक्रियायें मिलेगी, जिनमें पुरी के समुद्र की पछाड़ भी होगी और उड़िया समाज की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक बनावट की रंग-बिरंगी झलक भी। इस स्तर पर जगन्नाथ प्रसाद दास समकालीन उड़िया कविता की उसी काव्य-परम्परा की एक कड़ी लगते हैं, जिसके अग्रचेता कवितायों में एक ओर रमाकान्त रथ हैं, दूसरी ओर सीताकान्त महापात्र।

—केदारनाथ सिंह

लौटते समय

(उड़िया कविताएँ)

जगन्नाथ प्रसाद दास



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

राष्ट्र भारती
लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक : 471
पहला संस्करण : : 1989

लौटते समय
(उड़िया कविताएँ)

मूल कवि : जगन्नाथ प्रसाद दास
अनुवादक : राजेन्द्र प्रसाद मिश्र
प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
18, इंस्टीट्यूशनल एरिया
लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
फोटोटाइप सैटिंग
श्वेतकमल इलैक्ट्रॉनिक्स
दिल्ली-6
मुद्रक
शकुन ऑफसेट
नवीन शाहदरा,
दिल्ली-32

मूल्य : 45.00

आवरण : हरिप्रकश त्यागी

LAUTATE SAMAY (Oriya Poems) by Jagannath Prasad Das, Published by Bharatiya Jnanpith, 18, Institutional Area, Lodhi, Road, New Delhi-110 003 & Printed by Shakun Offset, Naveen Shahdara, Delhi 110 032.

First Edition,1989 Price Rs. 45.00

भूमिका

पिछले कुछ समय से हिन्दी में समकालीन उड़िया कविता के प्रति एक ख़ास तरह की दिलचस्पी पैदा हुई है। अतः इस बीच अनेक प्रतिष्ठित तथा नये उड़िया कवियों की कवितायें अनूदित होकर हिन्दी में प्रकाशित हुई हैं और उन्होंने अपनी विशिष्ट वर्णच्छटा और आस्वाद के कारण हिन्दी के कविता प्रेमियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। जगन्नाथ प्रसाद दास का नाम ऐसे ही बहुचर्चित उड़िया कवियों में से एक है, जिनसे हिन्दी का पाठक अपरिचित नहीं है। इनके तीन काव्य-संकलन पहले भी हिन्दी-अनुवाद में पाठकों के सम्मुख आ चुके हैं और यह चौथा आपके हाथों में है। यह संकलन अपने आकार में ख़ासा बड़ा है। परन्तु यदि केवल यह आकार में ही बड़ा होता तो कोई ख़ास बात न थी। इन कविताओं से गुज़रने के बाद पाठक देखेंगे कि यहां कवि की दुनिया के ओर-छोर कुछ और फैले हैं, अनुभव और सघन हुए हैं तथा भाषा और शिल्प में और कसावट आई है। यही बात इस संकलन को विशिष्ट बनाती है और समकालीन भारतीय कविता में दिलचस्पी रखने वाले पाठक के लिये अनिवार्य अपरिहार्य भी।

लौटते समय नाम की अपनी एक सार्थकता है। एक सतर्क पाठक की दृष्टि से यह तथ्य ओझल नहीं रहेगा कि इस संग्रह की कवितायें शब्द और मौन के बीच एक निरंतर आवाजाही के तनाव से पैदा हुई हैं। यह अकारण नहीं है कि संग्रह की अधिकांश कवितायें एक ध्वनि-बिम्ब या हरकत से शुरू होती हैं और अक्सर एक गहरे मौन में पर्यवसित हो जाती हैं। पर होता यह है कि हर कविता के मौन के बाद फिर एक नई शुरुआत होती है जहां—

अकेलेपन के घाव से
शब्द चूने लगते हैं लहू की तरह

इस तरह शब्द और मौन के बीच की आवाज़ ही संग्रह की पहली कविता से अन्तिम कविता तक अटूट बनी रहती है। शायद इसी अर्थ में ये कवितायें लौटते समय की कवितायें हैं—जिसमें शब्द से मौन की ओर लौटना और पुनः मौन से शब्द की ओर लौटना— ये दोनों प्रक्रियायें एक साथ शामिल हैं। इस तरह लौटना यात्रा की समाप्ति का सूचक नहीं, बल्कि उसके कभी न समाप्त होने की प्रक्रिया का बोधक बन जाता है।

परन्तु यह 'मौन' है क्या? रहस्यवादियों के मौन से जगन्नाथ प्रसाद दास का मौन किस अर्थ में भिन्न है? कहने की ज़रूरत नहीं कि मौन कई बार शब्द से भी ज़्यादा मानीख़ेज़ होता है और इसीलिये उसके साथ यह ख़तरा भी होता है कि उसकी व्याख्या मनमाने ढंग से की जाय। इन कविताओं की गहराई से पड़ताल की जाय तो पता चलेगा कि यहां पंक्तियों के बीच और अक्सर पंक्तियों में भी जो एक ख़ास तरह का मौन है, वह एक जाना-पहचाना-सा मानवीय कौन है—सामाजिक वृन्दगान के बीच एक-दूसरे से बोलता-बतियाता हुआ आदमी का अपना नितान्त व्यक्तिगत मौन—

प्रत्येक सम्बन्ध
जबकि एक वृन्दगान है
हमारी बातचीत
समय की स्वर-लिपि में
एक पारस्परिक मौन है।

लौटते समय के कवि को पता है कि शब्द जब अर्थवान होता है तो यह अर्थवत्ता उसमें आती कहां से है। 'निर्जनता' शीर्षक कविता में वह अपना आशय इस तरह प्रकट करता है—

उसके बाद शब्द
देवी शक्ति सम्पन्न नहीं रहता
क्योंकि जहां निर्जनता का साम्राज्य
फैल जाये
वहां निस्तब्धता की
एक अलग परिभाषा है।

शब्द दैवी शक्ति-सम्पन्न निर्जन में नहीं, जन-जीवन के बीच होता है, इसको लेकर मौन की व्याख्या करने वाले इस कवि को कोई भ्रम नहीं है। वह समय के छूटे हुए पद-चिन्हों को पहचानता है और इस बात से दुखी होता है कि हर बीते हुए दिन के साथ हमारी पृथ्वी कुछ और छोटी हो जाती है, कुछ और बंट जाती है—

ॠतुएं समय पर
नक्शा छोड़ जाती है
पृथ्वी बंट जाती है
अनगिनत कमरों में।

पृथ्वी के छोटे-छोटे अनगिनत कमरों में बंट जाने का यह दु:ख, हमारे सामाजिक विघटन के किस पहलू की ओर संकेत कर रहा है, यह बताने की ज़रूरत नहीं। **लौटते समय** की कविताओं में कवि का यह दु:ख कई तरह से व्यक्त हुआ है, पर वह कहीं भी इतना मुखर नहीं है कि माइक की आवाज़ की तरह हमारे कान के पर्दों पर आघात करे। यह मौन-प्रेमी कवि धीमे बोलने में विश्वास करता है और शायद इस तरह अपनी कला सम्बन्धी उस विशेष मान्यता को भी सूचित करना चाहता है कि अभिव्यक्ति का सौन्दर्य उसकी धीमी धीमी गूंज या उसके मितकथन में ही है। इसमें शक नहीं है कि

अपने इस प्रयास में कवि काफ़ी हद तक सफल हुआ है—और वह भी एक ऐसे समय में जबकि कविता का एक बहुत बड़ा हिस्सा अपनी अतिशय मुखरता में ही अपनी सार्थकता खोजने की कोशिश कर रहा है।

लौटते समय की कविताओं की एक बहुत बड़ी विशेषता यह भी है कि वे जड़ों से कटी हुई कवितायें नहीं हैं। इस संग्रह का कवि जड़ों से गहरी संसक्ति और आधुनिकता के बीच कोई विरोध नहीं देखता। इसी के चलते यहां अधिकतर कविताओं में एक संस्कारी मानस की ऐसी भावमयी तथा चिन्तनपरक प्रतिक्रियायें मिलेंगी, जिनमें पुरी के समुद्र की पछाड़ भी होगी और उड़िया समाज की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक बनावट की रंग-बिरंगी झलक भी। कहें तो कह सकते हैं कि यह विशेषता एक प्रकार से आज की समूची उड़िया कविता की विशेषता है। इस स्तर पर जगन्नाथ प्रसाद दास समकालीन उड़िया कविता की उसी काव्य-परम्परा की एक कड़ी लगते हैं, जिसके अग्रचेता कवियों में एक ओर रमाकान्त रथ हैं, दूसरी ओर सीताकान्त महापात्र।

इस संग्रह की कविताओं को पढ़ते समय पाठक का ध्यान एक और तथ्य की ओर भी ज़रूर जायेगा और वह यह है कि यह संग्रह वस्तुत: एक ही लम्बी अनुभव-श्रृंखला का रचनात्मक अभिलेख है। इसलिये काव्यस्तम्भ की निरन्तरता को बनाये रखने के लिये अच्छा यह होगा कि पूरे संग्रह को एक ही दीर्घ कविता की तरह पढ़ा जाये। संग्रह की अंतिम कविता 'अंत' जैसे पूरे संग्रह की मूल भावनाएं समेटती हुई एक ऐसी परिपक्व परिणति पर पहुंचकर समाप्त होती है जहां एक त्रासद मोहभंग से उपजी गहरी मानवीय पीड़ा भी है और उस पीड़ा को देख सकने की एक कलात्मक तटस्थता भी:

रणक्षेत्र सुनसान है
किसी की भी आँख में आँसू नहीं।

किसी महायुद्ध में अंत की तरह **लौटते समय** की कविताओं का अंत भी एक गहरे निर्वेद में होता है—एक ऐसा निर्वेद जो अपनी अन्तर्वस्तु में आधुनिक है और इसीलिये अपने पूरे ताप और तीव्रता के साथ मानवीय भी।

कविता का अनुवाद एक कठिन काम है, परन्तु यदि एक भाषा की कविता को दूसरी भाषा तक पहुंचाना है तो इसके सिवा कोई दूसरा उपाय भी नहीं है। भारतीय संदर्भ में तो यह लगभग अपरिहार्य है। इस दिशा में पिछले कुछ वर्षों में कई महत्वपूर्ण प्रयास हुए हैं और प्रस्तुत प्रयास उसी श्रृंखला की एक कड़ी है। अनुवादक ने मूल के साथ कितना न्याय किया है, इस पर टिप्पणी करने का अधिकारी मैं नहीं हूं। पर इतना ज़रूर कह सकता हूं कि अनुवादक श्री राजेन्द्र प्रसाद मिश्र की समकालीन हिन्दी कविता के मिजाज़ और उसकी भाषा पर गहरी पकड़ है, जिसके प्रमाण इस संग्रह में सर्वत्र मिल जायेंगे। मुझे विश्वास है कि इस संग्रह के प्रकाशन के साथ हिन्दी का अनुवाद साहित्य सम्पन्न होगा और साथ ही श्री दास की कविता के प्रति हिन्दी पाठकों में एक नई उत्सुकता पैदा होगी।

30 अप्रेल, 1989 —**केदारनाथ सिंह**

परन्तु यह 'मौन' है क्या? रहस्यवादियों के मौन से जगन्नाथ प्रसाद दास का मौन किस अर्थ में भिन्न है? कहने की ज़रूरत नहीं कि मौन कई बार शब्द से भी ज़्यादा मानीख़ेज़ होता है और इसीलिये उसके साथ यह ख़तरा भी होता है कि उसकी व्याख्या मनमाने ढंग से की जाय। इन कविताओं की गहराई से पड़ताल की जाय तो पता चलेगा कि यहां पंक्तियों के बीच और अक्सर पंक्तियों में भी जो एक ख़ास तरह का मौन है, वह एक जाना-पहचाना-सा मानवीय कौन है—सामाजिक वृन्दगान के बीच एक-दूसरे से बोलता-बतियाता हुआ आदमी का अपना नितान्त व्यक्तिगत मौन—

प्रत्येक सम्बन्ध
जबकि एक वृन्दगान है
हमारी बातचीत
समय की स्वर-लिपि में
एक पारस्परिक मौन है।

लौटते समय के कवि को पता है कि शब्द जब अर्थवान होता है तो यह अर्थवत्ता उसमें आती कहां से है। 'निर्जनता' शीर्षक कविता में वह अपना आशय इस तरह प्रकट करता है—

उसके बाद शब्द
देवी शक्ति सम्पन्न नहीं रहता
क्योंकि जहां निर्जनता का साम्राज्य
फैल जाये
वहां निस्तब्धता की
एक अलग परिभाषा है।

शब्द देवी शक्ति-सम्पन्न निर्जन में नहीं, जन-जीवन के बीच होता है, इसको लेकर मौन की व्याख्या करने वाले इस कवि को कोई भ्रम नहीं है। वह समय के छूटे हुए पद-चिन्हों को पहचानता है और इस बात से दुखी होता है कि हर बीते हुए दिन के साथ हमारी पृथ्वी कुछ और छोटी हो जाती है, कुछ और बंट जाती है—

ऋतुएं समय पर
नक्शा छोड़ जाती है
पृथ्वी बंट जाती है
अनगिनत कमरों में।

पृथ्वी के छोटे-छोटे अनगिनत कमरों में बंट जाने का यह दुःख, हमारे सामाजिक विघटन के किस पहलू की ओर संकेत कर रहा है, यह बताने की ज़रूरत नहीं। **लौटते समय** की कविताओं में कवि का यह दुःख कई तरह से व्यक्त हुआ है, पर वह कहीं भी इतना मुखर नहीं है कि माइक की आवाज़ की तरह हमारे कान के पर्दों पर आघात करे। यह मौन-प्रेमी कवि धीमे बोलने में विश्वास करता है और शायद इस तरह अपनी कला सम्बन्धी उस विशेष मान्यता को भी सूचित करना चाहता है कि अभिव्यक्ति का सौन्दर्य उसकी धीमी धीमी गूंज या उसके मितकथन में ही है। इसमें शक नहीं है कि

अपने इस प्रयास में कवि काफ़ी हद तक सफल हुआ है—और वह भी एक ऐसे समय में जबकि कविता का एक बहुत बड़ा हिस्सा अपनी अतिशय मुखरता में ही अपनी सार्थकता खोजने की कोशिश कर रहा है।

लौटते समय की कविताओं की एक बहुत बड़ी विशेषता यह भी है कि वे जड़ों से कटी हुई कवितायें नहीं हैं। इस संग्रह का कवि जड़ों से गहरी संसक्ति और आधुनिकता के बीच कोई विरोध नहीं देखता। इसी के चलते यहां अधिकतर कविताओं में एक संस्कारी मानस की ऐसी भावमयी तथा चिन्तनपरक प्रतिक्रियायें मिलेंगी, जिनमें पुरी के समुद्र की पछाड़ भी होगी और उड़िया समाज की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक बनावट की रंग-बिरंगी झलक भी। कहें तो कह सकते हैं कि यह विशेषता एक प्रकार से आज की समूची उड़िया कविता की विशेषता है। इस स्तर पर जगन्नाथ प्रसाद दास समकालीन उड़िया कविता की उसी काव्य-परम्परा की एक कड़ी लगते हैं, जिसके अग्रचेता कवियों में एक ओर रमाकान्त रथ हैं, दूसरी ओर सीताकान्त महापात्र।

इस संग्रह की कविताओं को पढ़ते समय पाठक का ध्यान एक और तथ्य की ओर भी ज़रूर जायेगा और वह यह है कि यह संग्रह वस्तुतः एक ही लम्बी अनुभव-श्रृंखला का रचनात्मक अभिलेख है। इसलिये काव्यस्तम्भ की निरन्तरता को बनाये रखने के लिये अच्छा यह होगा कि पूरे संग्रह को एक ही दीर्घ कविता की तरह पढ़ा जाये। संग्रह की अंतिम कविता 'अंत' जैसे पूरे संग्रह की मूल भावनाएं समेटती हुई एक ऐसी परिपक्व परिणति पर पहुंचकर समाप्त होती है जहां एक त्रासद मोहभंग से उपजी गहरी मानवीय पीड़ा भी है और उस पीड़ा को देख सकने की एक कलात्मक तटस्थता भी:

> रणक्षेत्र सुनसान है
> किसी की भी आँख में आँसू नहीं।

किसी महायुद्ध में अंत की तरह **लौटते समय** की कविताओं का अंत भी एक गहरे निर्वेद में होता है—एक ऐसा निर्वेद जो अपनी अन्तर्वस्तु में आधुनिक है और इसीलिये अपने पूरे ताप और तीव्रता के साथ मानवीय भी।

कविता का अनुवाद एक कठिन काम है, परन्तु यदि एक भाषा की कविता को दूसरी भाषा तक पहुंचाना है तो इसके सिवा कोई दूसरा उपाय भी नहीं है। भारतीय संदर्भ में तो यह लगभग अपरिहार्य है। इस दिशा में पिछले कुछ वर्षों में कई महत्वपूर्ण प्रयास हुए हैं और प्रस्तुत प्रयास उसी श्रृंखला की एक कड़ी है। अनुवादक ने मूल के साथ कितना न्याय किया है, इस पर टिप्पणी करने का अधिकारी मैं नहीं हूं। पर इतना ज़रूर कह सकता हूं कि अनुवादक श्री राजेन्द्र प्रसाद मिश्र की समकालीन हिन्दी कविता के मिजाज़ और उसकी भाषा पर गहरी पकड़ है, जिसके प्रमाण इस संग्रह में सर्वत्र मिल जायेंगे। मुझे विश्वास है कि इस संग्रह के प्रकाशन के साथ हिन्दी का अनुवाद साहित्य सम्पन्न होगा और साथ ही श्री दास की कविता के प्रति हिन्दी पाठकों में एक नई उत्सुकता पैदा होगी।

30 अप्रैल, 1989 —केदारनाथ सिंह

अनुक्रम



आरंभ

ज़िंदगी की बंद गलियों में
अचानक मुलाकात
और ढेर सारे वायदे

लौटते समय

यह सब प्राप्यं था हमारा
समयातीत सँपर्क के दावे में
ऐसा आनँद जो अलौकिक है
ऐसा सँघर्ष जो अपार्थिव है

हमारीं मुट्ठियों में जो भी कुछ था
मुलाकात की अप्रस्तुत घड़ियों में
सपाट समय को देख
हमने उसे अस्वीकार कर दिया
अपने-अपने कपट की निर्लिप्तता में

आपस में हम एक-दूसरे को
जो भी कुछ सौंप सकते थे
लौटते वक़्त वह सारा कुछ
दे गये समय को

प्रतिबिंब

मैं देखता रहूँगा आईने को
जब तक तुम आकर
मेरे पास खड़ी नहीं हो जातीं

तुम्हारे होठों पर थोड़ी-सी
रहस्यमय मुस्कान भर आने पर
हमारे प्रतिबिंब पुनः तैर जायेंगे
किसी विस्मृति के अँधेरे में
मुझे अकेला छोड़कर

मैं आँखों को पोंछकर
प्रतिबिंब के दोबारा लौट आने की राह
पुनः देखता रहूँगा

प्रतीक्षा

जब तुम मेरे सपने से
किसी दूसरे के सपने में चली जाओगी
मैं लौट जाऊँगा
अपने एकांत में
जहां मैं निरंतर प्रतीक्षारत हूँ

जब तुम मेरे अनुभव से
किसी दूसरे के अनुभव में चली जाओगी
मैं लौट जाऊँगा
अपने सपनों के अमरत्व में
जहां कोई प्रतीक्षा
नहीं हुआ करती

वर्तमान

मेरा सारा इंतज़ार
अतीत के लिए था

मेरी सारी यादें
केवल भविष्य के लिए

जो कुछ
बिना याद के है
बिना इंतज़ार के
वह मेरा वर्तमान है

समय

समय का तीसरा पहलू नहीं है

ज़िंदगी
जन्म को जकड़ रखने के कारण
मृत्यु का अभिशाप है

स्मृति सज़ा है
बीते हुए को न छोड़ने के कारण

समय को कोई पश्चात्ताप नहीं होता
जब अतीत वर्तमान को
तलाशता आता है
भविष्य के खिलाफ़
गवाह बटोरता

सीमांत

दु:स्वप्न में भविष्य नहीं दीखता
पर आँखें देख लेती हैं
सारी संभावनाएं सारी अनुपलब्धियां

तुम्हारे आँखें बंद कर
पलकों के अंतराल में
किसी सपने के अनजाने राज्य में
चले जाने से पहले

मैं ख़ुद को देखूँगा
तुम्हारे असीम सीमांत पर
अपने टूटे सपने
बचाने के प्रयास में
मैं ख़ुद को तुम्हारी आँखों के
मुक्तिहीन अँधेरे में
चुकते हुए देखूँगा

समझौता

अँधेरे को छिन्न-भिन्न कर
जब तुम
अप्रस्तुत सुबह की तरह
परिपार्श्व के समन्वय को तोड़ती हुई आओगी
मैं समझूँगा
मेरा आधिपत्य अब संभव नहीं

स्मृति खोने से पहले
मैं तुम्हारे लिए
एक याद भरी पंक्ति
लिख जाऊँगा

अपरिपक्व रात्रि के अंत में
सुबह का सामना करने
मैं बाहर निकलूँगा

जहाँ मेरा अधिकार
सिर्फ़ तुम्हें
नारंगी धूप बनकर छा जाते देखना होगा
जहाँ मृत्यु के साथ
समझौता कर लेने पर
स्मृति खोने का डर नहीं रह जायेगा

सूर्यालोक

अपने नीले आवरण में
सूर्य के प्रकाश को
आकाश सीमित समय तक ही
ढँके रख सकता है

जब बादल
विषाद के श्रृंखलित दिनों को
गोद में लेकर आकाश से उतरेंगे
नीला आवरण पिघल जायेगा

सूर्य के सारे रंग
शोक के एक विचित्र विस्फोट से
आकाश को रंग देंगे
इन्द्र-धनुष के विविध रंगों से

दर्पण

जब सारे प्रतिबिंब
छल से जर्जरित हो
मेरे प्रेम से प्रश्न करने जायेंगे
मैं अविश्वसनीय दर्पण को
टूट जाने का अभिशाप दूँगा
ताकि काँच सी पारदर्शी पीड़ा में
न कोई जिज्ञासा
न कोई संप्रेषण बच सके

दर्पण के टुकड़े
मेरे चारों ओर बिखर जाने पर
सारे प्रतिबिम्ब लौट जायेंगे
निरंतर गूँजते वृंदगान में
मेरे प्रत्येक दिन के लिए
मृत्यु की असंख्य क्षमाहीन
आवाजों को लिए

अनोखा देश

शून्यता से छुटकारा पाने के लिए
तट पर खड़े हो
जब मैंने समुद्र से प्रश्न किया
मेरे प्रश्न और प्रतिध्वनि
नीले रंग में
खो गये

उत्तर के रूप में सिर्फ़
लहर मेरे क़दमों के पास
छोड़ गयी
एक दूसरी निस्तब्धता
यह एक अनोखा देश है
जहाँ सारे अनुभव
शोक में बदल जाते हैं
सारे स्वर वीराने हो जाते हैं

सुबह

रात के आईने में
प्रतिबिंब नहीं होता

सन्नाटे की साँस
दीवार से टकराकर घनी हो जाती है

सारा कमरा भर जाता है
स्तब्ध प्रतिध्वनि के आवेश से

फिर सुबह के उजाले में
सब धुल जाते हैं
दीवार पर हल्की प्रतिध्वनि का टुकड़ा
हवा का प्रतिबिंब

अब सारे कमरे में
सभी अपनी-अपनी जगह हैं

सिवा तुम्हारे चेहरे के आईने में
एक अतृप्त रात की स्मृति के

हम स्वयं

हम स्वयं राह हैं अपनी
जिससे होकर हम गुज़र गये
अपनी इन्द्रियों के तोरण तले

हम ख़ुद वातावरण हैं अपने
ख़ुद अपना स्वर, वर्ण, गंध
हमारे ही अंदर चुक गया सबेरा और साधना
हमारे अंदर बुझ गया आकाश और आकांक्षा
हमारे ही अंदर खो गया समुद्र और धैर्य
हम स्वयं राह भटक गये
अपनी निरंतर असीमता में

मनुष्य जो सोचता है
अपनी स्वयं सम्पूर्णता में
वही उसका उद्देश्य है
जिस ओर जाता है वही उसका लक्ष्य
जो मिलता है सब उसका प्राप्य
जहां कदम पड़ते हैं सब उसके रास्ते

स्वत्व

सुनसान कोठरी समेटे रखती है
कदमों की आहट

स्थिर हवा समेट लेती है
उड़ते डैनों की फड़फड़ाहट

विवर्ण आकाश नहीं त्यागता
इन्द्र-धनुष का शेष भग्नांश

मधुमक्खी की गूँज बंद रह जाती है
फूल की ख़ामोश पँखुड़ियों में

अतीत के उत्तरदायित्वों को लेकर
हम स्वीकार कर लेते हैं
भविष्य के पूर्वजों को

नियति

जिस वक़्त मैं
भविष्य की उड़ानें भरता हुआ
तुम्हारे अतीत से बंध जाऊँगा
जिसके आगे राह नहीं
अपना वर्तमान
मैं किसे सौंप जाऊँगा

क्या तुम निश्चित रूप से
निर्धारित कर सकोगी
मेरे वर्तमान की नियति
जिसका कोई अतीत न हो

स्वीकार

मैं तुम्हें सौंप जाऊँगा
अपने जीवन का पहला पग डग
एकमात्र भेंट और विछोह
एक साथ भोगा आनंद
और एक आपसी विषाद

तुम्हारे सारे संकोच
उन्हें अस्वीकृत छोड़ जायेंगे
किसी दूसरे समय तक के लिए

आने वाले दिनों में
जब तुम
उन्हें अपना लोगी
वर्तमान की सारी घड़ियाँ
अतीत बन चुकी होंगी

इस बार स्वीकार सम्भव है
सिर्फ समय से बाहर
जहाँ हमारे अलावा कोई न होगा
वर्तमान की याद का दावा करने वाला

सूर्यास्त

तुम्हारे पार्श्व में
जब सूर्य डूब जायेगा
वहां एक निरालोक देश होगा
सुनसान अंतरिक्ष
और अस्पष्ट आकाशगंगा

तुम्हारे शरीर से होकर
चक्रवात गुज़र जाने पर
तुम्हारी आँखों में रह जायेगा
महज एक खौफनाक अँधेरा

अँधेरा जो तुम हो

मैं डरकर लौट आऊँगा
राह टटोलते हुए
अपने निजी सन्नाटे में

वह सन्नाटा भी तुम हो

आँखें

तारे जब
मुझे अपने
अंधकाराच्छन्न रहस्य में
ढँक लेते हैं
उन्हें साक्षी रखकर
मैं सुबह की ओर हाथ बढ़ाता हूँ

तारे जब धीरे-धीरे
विलीन हो जाते हैं
मैं तुम्हारी
खुलती हुई आँखों को निहारता हूँ

सुबह होने से पहले
पुन: खो जाता हूँ
अवशिष्ट दो तारों के
निजी अँधेरे में

चरम सत्य

यहाँ कोई तथ्य
प्रासंगिक नहीं
अलावा तुम्हारी तात्कालिक कामना के
जो एक चरम सत्य है

यहाँ कोई तत्व
उपयुक्त नहीं
अलावा तुम्हारी सक्रिय उदासीनता के

यह एक दूसरा चरम सत्य है

परिभाषा

मिलन और विरह के कल्प से होकर
जो आते हैं वे हैं कुछ पल
जरा और मृत्यु की आवृत्ति में बीत जाते हैं
ऋतु चक्र के क्रम
जन्म-मृत्यु के विवर्तन से गुज़र जाते हैं
दिन महीना वर्ष

स्मृतियों की सहजता में
जीवन से जो कुछ घट जाता है
उसका नाम है आयु
प्यार की अवर्तमानता में
जो कुछ बीत जाता है
उसका नाम है सत्य

भय

निर्जनता का जादू टूटने के भय से
हमने मौन साध लिया

विछोह निश्चित जान
संक्षिप्त कर दिया
मिलन के क्षणों को

आँखों से आँखों को हटा लिया
संशय उपजने से पहले

हमने बातचीत बंद कर ली
संबंध असह्य होने की आशंका से

समय और ऋतुचक्र के भय से
हमने पूरा जीवन निःशेष कर दिया
एक ही पल्लव के वसंत में

क्रम

सुबह बुला लाती है दोपहर को
जो अनुभूति की गहरायी से
स्मृतिबद्ध शब्दों को शेष कर देती है
और सपनों को विवस्त्र कर देती है
एक स्वीकृत सत्य से

दोपहर बुला लाती है शाम को
जहाँ अगाध स्नेह से ढँके आकाश
एवं शाश्वत गोधूलि में
कोई पश्चात्ताप नहीं

शाम बुला लाती है रात को
जहाँ सिर्फ़ एक निर्जन यातना
शून्य घड़ियों को पसार देती है
और प्रेम बन जाता है समय का स्तोत्र

शब्द

अकेलेपन के घाव से
शब्द चूने लगते हैं लहू की तरह

उन्हें पोंछ लेने को
कोई प्रत्युत्तर नहीं
सारे शब्द छोटी-छोटी
प्रतिध्वनियाँ बनकर जम जाते हैं

बंद हो जाता है रक्त-स्राव
शब्दहीन चुप्पी में

निर्वासन

तुम मेरा हाथ थामकर
जिन राहों पर ले गयीं
सब मेरे सपनों के अनूकूल थीं

हम जिस ऋतु में पहुँचे
वह तुम्हारे ही तत्वों से गढ़ा समय था
जिसकी मुझे चाह थी

हमारे मन मुटाव के दिनों में
मेरे निर्वासन के लिए
तुमने द्वीपों को चुन रखा है

पर ऐसा देश कहाँ
जो तुम्हारे व्यक्तित्व का मानचित्र न हो
ऐसा समय कहाँ
जो तुम्हारी व्यक्तिगत दिनचर्या न हो

अपने भीतर

मेरे ही अंदर
सारे द्वन्द्व और समन्वय
मेरे आकाश और समुद्र
अपने शीत और वसंत
अपनी आशा और स्वीकार

मैं शून्य को अपनी मुट्ठी में कैद कर लेता हूँ
और फिर मुट्ठी खोलने पर
अनगिनत तारे भाग जाते हैं
आकाश को बिन्दु-बिन्दु प्रत्याशा से
भर देने को

मेरी आँखों में सिमट जाती हैं
द्युतिमान सूर्य की सारी किरणें
मेरी बाँहों में लौट आती हैं
उमड़तीं चन्द्रमा की लहरें

मैं देवत्व का आह्वान करता हूँ
और मृत्यु को करता हूँ आश्वस्त
अस्तित्व की घाटी पर खड़ा हो
मैं समय को नीति-वचन सुनाता हूँ

फिर अपनी ही मरुभूमि में
रेत और संताप में
रास्ता भूलकर सो जाता हूँ
राह भटकती हवा की
भर्त्सना और हाहाकार भरा
संगीत सुनते-सुनते

तुम अगर

तुम अगर कुछ देर
और ठहर जातीं
तो शायद
मैं तुम्हारा अस्वीकार
स्वीकार कर लेता

ईश्वरत्व

सिवाय हमारी कामना के
यहाँ कोई दूसरा ईश्वर नहीं

जब सारी कामनायें
बार बार लौट आयेंगी
तुम्हारे शरीर के भोलेपन में
लक्ष्य भ्रष्ट होकर
मैं तुम्हारी आँखों की बंद गलियों में
अपनी शांति ढूँढूँगा
जो मेरा प्राप्य था

तुम्हारी तनी हुई भौंहों से
टकराकर मैं लौट आऊँगा
अपनी धृष्टता को धिक्कारने के लिए
पुनः अपनी कामना तक
जहाँ कोई ईश्वरत्व नहीं

अदृष्ट

तुम्हारा हर एक शब्द
एक-एक बिजली के समान था
जिसके लिए मैं तैयार न था

मेरे जाने की राह को
तुमने रोक दिया
समय के दुरुपयोग से

समय की खोहों में
कुछ सूनेपन को रख
तुम्हारी अनुपस्थिति जब
अवशेष घड़ियों को चुन लेगी
मैं निराशा को सहज ही सह लूँगा
तुम्हारे होंठों की आख़िरी हँसी
और
मौन बातों को याद कर

परिचय

तुम्हारे अस्तित्व के संदर्भ से परे
मेरा कोई परिचय नहीं

तुम्हारे प्रभाव से मुक्त
मेरा कोई जन्म स्थान नहीं
मेरी स्मृति की प्राचीनता मेरी उम्र
मेरी निष्कपट इच्छा के अलावा
मेरा कोई धर्म नहीं

मैं तुम्हारे अतीत का दावेदार
हमारे भविष्य का
उत्तराधिकार माँगते समय
मेरा कोई दूसरा परिचय नहीं होगा
मात्र हम दोनों के आपसी संबंध के

मुलाकात

आज की सुबह
जब मैं आईना देखूँगा
तुम अंतर्धान हो जाओगी
बीते हुए कल के अँधेरे में

दिनचर्या के पन्नों से
तारीख उतर जायेगी
एवं ऋतु बनकर उड़ जायेगी
मेरे खुले झरोखे से होकर

प्रतिबिंब के सीमांत तक
जहाँ मैंने
तुमसे मिलने का वायदा किया था
समय से बाहर

अभाव

मिलन की हर घड़ी
जहाँ एक स्वतंत्र द्वन्द्व हो
वहाँ भला और क्या संभव हो सकता है
तुमसे उधार लिया हुआ भाग्य
तुम्हें ही सौंप देने के अलावा

तुमसे परिचय के
इन विरोधी क्षणों में
सिर्फ़ तुम्हीं दे सकोगी सामर्थ्य
तुम्हें भूल जाने और
याद रखने का

अंत में तुम मेरे लिए
आशा या आकांक्षा नहीं
केवल एक विषण्ण
अभाव ही रह जाओगी
जिसे कभी
विछोह अलग कर देता है
और कभी मिलन

वार्तालाप

मैं तुम्हारा नाम पुकारूँगा
जो सिर्फ एक
निरुत्तर प्रश्न बनकर
मँडराता रह जायेगा

जब मेरे सम्बोधन की प्रतिध्वनियाँ
तुम्हारी स्मृति में इकट्ठी हो जायेंगी
प्रत्याशित सुबह की किरणों को छूकर
झरने के कलकल से प्रतिबद्ध
पत्तों के मरमर से पुनरावृत होकर
मेरे पास लौट आयेंगी
पक्षियों के कलरव से
समुद्र के गर्जन से
निर्जनता की अनुगूँज से
क्षितिज की ओर फैलतीं
हवा की सनसनाहट से होकर

उस प्रतिध्वनि की प्रत्येक गूँज को
पृथ्वी बाँट लेगी
अपने सारे कोणों में
और मैं उसका जवाब दूँगा

तुम कैसे नकार दोगी तब
हमारे ऐसे वार्तालाप को

प्रेम पत्र

तुम्हारे प्रेमपत्र
जब मुझे अपनी
खुशियों के बीच बुला लेंगे
एक संक्षिप्त सपने में

तुम्हारे द्वयर्थक शब्दों में
विश्वासघात के अंतर्निहित मंतव्य
फिर से पढ़ने के लिए
मुझमें धैर्य न होगा

संवेदनशील कागज पर
ठहरी मेरी पहली दृष्टि
उन शब्दों को जला डालेगी
मात्र एक अंतिम निर्णय से
मेरी उतावली आँखों के
उन्हें पढ़ने से पहले

राजीनामा

तुम्हारी निकटता
जब मेरे आसक्तिहीन कपट को
उघाड़कर रख देगी
तुम्हारे मेरी ओर
अभियोग भरी आँखों से देखने से पहले ही
मैं सारे अपराध स्वीकार कर लूँगा

खुले झरोखे से होकर
हम दोनों के हाथ बढ़ जायेंगे
बाहर अपरिचित आकाश की ओर
जहाँ से हम एक और विस्मित ऋतु को लाकर सजा देंगे
सुबह के अख़बार
और ताज़े गुलाब के पास

मुखौटा

जब मेरा हृदय
असह्य रहस्यों से भर जायेगा
अपने तमाम मुखौटों के बोझ से
मैं टूट जाऊँगा

अपनी मौलिकता को देखने के प्रयास में
चेहरे से मुखौटों को उतार
मैं ख़ुद को खोलकर रख दूँगा
तुम्हारे चेहरे में निहित
हमारे संबंधों के आईने में

तुम्हारे चेहरे का अविश्वास
मुझे तोड़ डालेगा
मेरा सारा अपनापन जल जायेगा
तुम्हारी आँखों के सुलगते
विस्मय में

गलत रास्ता

तुम्हारे पास जाते समय
अन्यमनस्क हो
मैं बारबार लौट आता हूँ
ग़लत रास्ते से
राह भटककर

इस तरह राह भटकते समय
अचानक कभी-कभी
मेरे कंधे पर हाथ रख
तुम मुझे सतर्क कर देती हो

राह बदलकर
पुन: चला जाता हूँ
एक ग़लत रास्ते पर

समुद्र के किनारे शाम

सारे रास्ते खो जाते हैं
नभ के भग्नावशेष में

समय फैल जाता है
गुप्त बातों की लहरों में
शाम शेष हो आती है
दु:स्वप्न के आख़िरी संगीत में

जो अपरिचित हैं
अपरिचित ही रह जाते हैं

समुद्र के शान्त दर्पण में
सभी इच्छाएं चुक जाती हैं
अपने-अपने मूल्यांकन में

दूरी

मेरे पास होते हुए भी
तुम स्वयं को अस्वीकार कर
कभी-कभी अपने ही अंदर सिमट जाती हो
मुझसे अपने सारे संबंधों को नकारकर

फिर कभी तुम्हारी अवर्तमानता
समुद्र और समय से होकर
मेरी उदास घड़ियों में आ
मीठी बातें सुनाती हैं

हमारे संबंधों की
अतार्किक दूरी
विछोह और मिलन की
परिभाषा तय कर जाती है

पलटकर देखना

लौटता यौवन
जब मुझसे
भेंट करने पहुँचेगा

मैं अपना नाम भूल जाऊँगा
मेरा देश न होगा घर-बार न होगा
विगत और आगत न होगा
होगा मात्र कुछ यातनाओं का परिचय पत्र
और वहशी यादों की दूरी

भटकती उम्र के सामने
मैं मुँह लटकाए खड़ा होऊँगा
मेरे सामने सिर्फ़ अंधी गली की भावशून्य दीवार होगी
और पलटकर पीछे देखना

जहाँ से सारे रास्ते लौट जाते होंगे
विवशतावश बार-बार
प्रथम यौवन की भेंट की ओर

अँधेरा

मेरी आँखों के धुंधले उजाले
तुम्हें घर भर में तलाशेंगे
जहाँ तुम समूचे अँधेरे को
बटोरकर बैठी होगी
अंतिम किरणों की उपेक्षा कर

खोज में जुटे मेरे सारे उजाले
पूरी तरह बुझ जाने से पहले
तुम्हें फिर से सोचने का मौका दिये बिना
तुम्हारी रग-रग में समा जायेंगे
तुम्हारे गाढ़े अँधेरे की अवहेलना कर

सन्नाटा

प्रत्येक संबंध
जबकि एक वृंदगान है
हमारी बातचीत
समय की स्वरलिपि में
एक पारस्परिक मौन है

इसीलिए आत्मनिरीक्षण की घड़ी में
मैं सन्नाटे को चीरकर रख दूँगा
प्रेमपत्र की तरह
सूर्यास्त से मैं चुन लूँगा
इन्द्रधनुष के सातों स्वर
सारी रात तुम्हारी हँसी ढूँढने के बाद
मैं तुम्हारी ख़ामोशी को साफ कर दूँगा

सन्नाटे के अनेक रूप हैं
कई सन्नाटे सहज ही समझे जाते हैं
जो सन्नाटे समझ में नहीं आते
वे तुम्हारे संवाद हैं

एक दिन

हमारी दूरी का कारण था
तुम्हारी आँखों की निरंकुशता
जिसने भविष्य की माँगों को
समर्पित कर दिया
बैसाख की बची हुई ज्वाला में

मेरे हार जाने का अंकुर था
तुम्हारा अप्रस्तुत शरीर
जिसने सूर्य को परास्त किया
उत्तरायण के अकेलेपन में

आने वाले कल के सीमांत पर
गुज़रे समय की घोषणा ने
मुझसे छीन लिया
मेरी अपनी देवी को
दिन भर के जीवन में

संबंध

अपरिचितों के साथ
मेरा अद्‌भुत नाता है

मेरी आँखें रास्तों में ढूँढ़ लेती हैं
अन्य सारी आँखें
जिनमें पहचान की मुस्कुराहट नहीं

मैं पूरी तरह समझ जाता हूँ
उन अनुच्चारित शब्दों को
जो होंठों पर
थिरककर थमे होते हैं

तो फिर तुम कैसे
मेरी आँखों को लाँघ कर
रास्ता पारकर जाओगी
विषण्ण और चुपचाप
अपरिचय की ओट लेकर

लौटते समय

समझौते की निर्वाक् घड़ी में
लौटकर जाते हुए दिन
हमें पीछे छोड़कर चले जाएँगे
हमारे याद दिलाने से पहले

जाते समय
आपस में एक दूसरे से किये
हमारे वायदे
पलटकर हमारी ओर देखेंगे
भारी तरस से
हमारे कुछ कहने से पहले

दुविधा

फीकी हँसी की विवशता
भीड़ को नि:शेष कर देती है
धूसर अविश्वास में

सर्वसम्मत बातों की ध्वनिं से
छाया उतर आती है पेड़ से
हरियाली के सारे मर्मर पोंछकर

हाथ के औपचारिक स्पर्श
हवा बन उड़ा लेते हैं घास पर से
ओस की बूँदों की आंतरिकता

कहीं न देखती आँखें जला देती हैं
दूर फैलती रोशनी
क्षितिज की प्रत्याशा को

तुम्हारे आत्म प्रकाश के संकोच
कुछ और ख़ाली कर जाते हैं
समुद्र पर प्रतिबिंबित
आकाश की बढ़ती उम्र को

तुम्हें जानने के बाद

मेरे तुम्हें जानने के बाद
तुम एकाकी कैसे रह जाओगी

तुम कैसे खो जाओगी
मेरे ढूँढ़ने से पहले
अनजान अँधेरे से होकर
तुम पुनः मुझ तक लौट आओगी
आवाजाही के अनुक्रम में

मेरे हाथों को रोक लेगा
तुम्हारे चेहरे का सनातन निषेध
मैं किंकर्तव्यविमूढ़ रह जाऊँगा
एक अपरिचित क्षोभ से
पर पुण्य कैसे है
पाप का अर्थ समझने से पहले

तुम कैसे चली जाओगी
मेरे ताकते रहने की उपेक्षा कर
सारे रास्ते चुक जायेंगे
मेरी आँखों की देहरी पर

भाग्य

तुम्हारे होंठों पर
मेरे नाम के सामयिक उच्चारण में
ऐसा कौन-सा अपशकुन था
जिसने एक कर दिया
घिरती आँधी, उल्काओं की बारिश
और टूटते तारों को

तुमने जैसा उच्चारण किया था
उसका कोई विकल्प नहीं है
वो सिर्फ़ याद आता है
थर्राती हवा के पहली राह भटकने में
बूँद-बूँद बारिश के पृथ्वी से प्रश्न करने में
मेरे भाग्य में सिर्फ़ उन्हें सह लेना ही है

जवाब देने का सामर्थ्य नहीं
इसलिए मैं तुम्हें सौंप जाऊँगा
निर्जनता का पहला नैवेद्य
तुम्हारी खुली हथेली पर
रख जाऊँगा
समय के क्षोभ से जुड़े
अपने सारे गहरे संशय

शरीर

केवल मन ही ने बनाया
प्रेम विरह और भय
केवल हृदय दे गया
उससे उपजे सारे शोक

इंन्द्रिय दे गयी
उपलब्धि का आनंद
शरीर दे गया
स्वीकारने का अर्थ

आँखों में ध्रुवतारे की सच्चाई छुआकर
शरीर दे गया दिशाहीन आश्वासन
रेत पर लिख गया मिलने का समय
मन ने आकर क्षण भर में सब कुछ मिटा दिया

शरीर में अनश्वर रह गयी
मन के सारे सपनों की क्षणिकता

वर्णमाला

मैं अपनी कविता को देखता हूँ
शीतल पंक्तियों का विद्वेषी देश
जहाँ के लिए तुमने मुझे
निर्वासित किया था

जहाँ शब्दों की हहराती रेत
समयहीन अतीत से ढूँढ़ती है
संबंधों के लालायित श्रावण
और घनिष्ठता की स्वाभाविक बौछारें

शब्दों के कारावास में
रूपकों की दीवारें घेर लेती हैं
अमीमांसित सपनों को
एक ऐतिहासिक सत्य से

निर्वासित द्वीप के कारावास से
अर्थ के बंधनों को खोल
मैं बाहर पैर रखता हूँ
आगे केवल एक ही रास्ता है
वहां से मैं जा सकता हूँ
वर्णमाला से होकर
अतीत को अग्रसर होती
तुम्हारी अवर्तमानता तक

स्मृति

मैं जो भी कुछ देखता हूँ
सब एक अपूर्ण याद के शीशे से होकर
जो सार्वजनिक दृश्य को
अद्भुत ढंग से रंगीन किए होता है
समय के बुलबुलों पर
इन्द्र धनुषी रंगों के छींटे देकर

मैं जो भी कुछ सोचे रहता हूँ
किसी का भी अपना स्थिर रूप नहीं है
अतीत से संबंधित बातों से
सभी मेरी चेतना में तरंगायित हैं

तुम्हारी आँखों की गहराई में
मैं ख़ुद को जितना देखता हूँ
वह मेरे अनुभव से जड़ित
एक रूपांतरित आत्मा है

तुम्हारी आँखों का सम्मोहन
जब विस्तारित हो जाता है
मैं तुम्हारे चेहरे को
पत्थर की मूर्ति होते देखता हूँ

अमरत्व के पहले स्पर्श में
मैं स्मृति को अस्वीकार कर देता हूँ

कागज की देवी

तुमसे परिचय हुआ
प्रेम कविता की पंक्तियों के माध्यम से
तुम्हें पूरी तरह जानना संभव नहीं
तुम पर से स्वर और व्यंजन की
सजावट हटाना असंभव है
तुम्हें विवस्त्र कर देना स्वप्न मात्र है

अपने चेहरे से घूँघट
या छाती से आँचल हटाते समय
तुम पुनः अपने चारों ओर
घेर लेती हो
अति आत्मीयता से
प्रतीकों और संकेतों का घूँघट
तथा रूपकों और बिंबों की पोशाक

तुम्हारी बात की सजावट
एवं तुम्हारे वार्तालाप के अंतहीन वस्त्रों में से
ऐ कागज़ की देवी
तुम्हें मौलिक रूप से
ढूंढ पाना संभव नहीं

चले जाओ

मेरी आँखों से तुम तक फैला है
सीमाहीन ढँग से व्याप्त
एक सुनसान असीम मरुस्थल है
जो चिल्ला-चिल्लाकर कहता है
चले जाओ मेरे पास से

जब मैं तुम्हें दुबारा देखूँगा
तुम्हारी ठहरी आँखों में
घटाओं की लहरें नहीं होंगी
तुम्हारी आँखों में होगी सिर्फ़ धूल की आँधी

धूल की आँधी में बारिश नहीं होती
धूल की आँधी में सिर्फ़ होता है
एक सुनसान मरुस्थल
जो चिल्ला चिल्लाकर कहता है
चले जाओ मेरे पास से

ज्ञान

तुम्हारा दु:साध्य अध्ययन करने के बाद
अपने अध्यवसाय के फलस्वरूप
मैं अच्छी तरह समझ लूँगा
तुम्हारी हरेक बात की अलंकारिकता
तुम्हारे उच्चारण की विश्वसनीयता

तुम्हारी आँखों की किंचित् हलचल
अंगुलियों का हल्का कंपन और
सिर के ज़रा झुका लेने में
निहित तात्पर्य और वायदे

मैं ठीक तरह पढ़ लूँगा
तुम्हारी भावना का राशिफल
तुम्हारी संवेदना की ऊष्मा
तुम्हारी हाँ और ना की अभिन्नता

फिर जब
अपना अत्यंत श्रमसाध्य ज्ञान लेकर
मैं तुम्हारे सम्मुख आऊँगा
तुम अपनी भाषा और भाव-भंगिमा
बदल लोगी

बदल लोगी अपनी
शब्द चातुरी उच्चारण व्यंजना
और मुद्राओं की व्याख्या

अपने सहज रूपांतरों में
बारबार मुझे निर्वासित कर दोगी
मेरी पहली अज्ञानता को

साम्राज्ञी

तुम्हारी आँखों के लिए
झील समुद्र जलप्रपात
और क्षितिज-समेत आकाश
वाचाल हो उठे थे
अपनी एक ही दृष्टि से
तुमने उन्हें चुप कर दिया

तुम्हारे माध्यम से जिन्होंने
जीवन की उदारता को
स्वीकार लिया
अपने प्रेम के नगण्य अंश देकर
तुमने उन्हें लौटा दिया
मंथर मृत्यु की नैतिकता को

शाम

डैनों पर से छाया उतर जाती है
फूलों की पंखुड़ियों पर से फिसल जाती है
धूप की पसरती श्रद्धा
ऋतु के विस्मय घूम घूमकर
स्थिर हो जाते हैं

दीवार का सहारा लेकर
आकाश की ओर मुँह उठाती है
चमेली की लता
शून्य से छिटकते स्फुलिंग
पल भर में बुझ जाते हैं
अँधेरे की नन्हीं नन्हीं झीलों में

पर्वतों के बीच प्रतिध्वनि बंद रह जाती है
मधुमक्खियों की गूँज घुलमिल जाती है
पत्तों की अशांत साँसों में
जुगनुओं की बातचीत सुनायी देती है
अविराम प्रकाश की संकेत लिपि में

उड़ती घड़ियों की चंचलता बिखराकर
छाया की सघनता बता जाती है समय
तितली उतरती है शाम को
मुरझाते हुए फूल पर

बिदाई के समय

बिदाई मांगते समय
और कुछ नहीं बचता
समुद्र के बीच डूबते आदमी की
इच्छा नहीं होती चिल्लाने की

विदा मांगनेवाला सोचता है
प्रेम से अलग था चाहना
जीने से कितना अलग था जीवन
गाने से कितना दूर था संगीत

डूबनेवाला सोचता है
और स्वयं को सौंप देता है
लहरों से अलग समुद्र को ढूँढ़ते ढूँढ़ते
ख़ुद को अलग कर लेता है विदा माँगने से
डूबता हुआ आदमी

अनुषंग

तुम एक ऐसा आच्छन्न स्वर हो
जो मेरे कण्ठ से नहीं निकला
लेकिन जो प्रतिध्वनि की तरह
मेरे चारों तरफ़ फैल गया

तुम एक ऐसी अखण्ड ज्योति हो
जिसने मुझे प्रकाशित नहीं किया
लेकिन मेरे सभी अँधेरों को
और भी सघन कर दिया

तुम एक ऐसा तीव्र अनुभव हो
जो मेरा अपना नहीं हो सका
लेकिन जो मेरे पूरे जीवन की
प्रत्येक घटना पर छा गया

तुम एक ऐसी यातना हो
जो धीरे-धीरे
मेरे शोक में बदल गयी

स्तुति

किस तरह तुम्हारा वर्णन किया जाये
जहां तुम्हारी केशराशि समाप्त होती है
वहीं से आकाश शुरू होता है

मैंने तुम्हारी आँखों में
सूरज के कठोर प्रकाश को
धीरे-धीरे विलीन होते देखा है
तुम्हारे सीने में
आँधी को चुपचाप छा जाते
एवं तुम्हारे अंग प्रत्यंग में
समुद्र की लहरों को
निस्तब्ध होते देखा है

सृष्टि का प्रारंभ और शेष
अंतरिक्ष के बाद और अंतरिक्ष
क्षितिज आकाश-गंगा महाशून्य
वर्षा इन्द्र-धनुष आँधी बिजली उत्कापात
और सबों का विलीन होना

तुम तक पहुंचने के लिए
मेरी महायात्राएं
अपवित्र पुण्य के मध्याह्न से

पवित्र पाप की मध्य रात्रि तक
सच और कपट के सहारे
देवत्व और कुकर्म के माध्यम से
मैं तुमसे गुज़र कर
मृत्यु को छू पुन: लौट आया हूँ

किस तरह तुम्हारा वर्णन किया जाये
जहां आकाश समाप्त होता है
वहीं से तुम्हारी केश-राशि शुरू होती है

उपलब्धि

छाया और प्रतिध्वनि के साम्राज्य में
सच की उपलब्धि संभव नहीं

पूर्णता ढूँढना वृथा है
झूलते समय के घुमाव में
वास्तविकता पकड़ में नहीं आती
टूटे आईने के किनारे पर

हम और कितना जान सकते हैं
एक दूसरे को
घास के फूल को यदि मालूम नहीं
राह भटका पक्षी क्या सोचता रहता है
हताश राहगीर यदि
वापसी में नहीं समझता

कौन-सी अनजान पीड़ा
चमकती रहती है
इंद्र-धनुष में

कविगण

धूप के वृत्त के बीच खड़े हो
वे आँधी से प्रेरणा ढूँढ़ते रहते हैं
हालांकि बहती हवा
अबूझ शब्दों को दुहराती रहती है

समय का धिक्कार उड़ा ले जाता है
सूखे पत्ते और रेत
दिशाएं एक दूसरे को
ताकती रहती हैं
शब्दहीन मुद्रा में

हवा लाकर कलम की नोक पर
छुआ जाती है कुछ सूर्य किरणें
जो एक प्रशांत घड़ी में
स्थिर रह जाती है

कविगण छाया पर उतर आते हैं
एवं हवा के साथ तालमेल रखकर
थोड़ी और निर्जनता लिख जाते हैं

संपर्क

स्मृति से प्रश्न करते समय
क्या हम पहले जैसे रह सकेंगे

जिस रास्ते पर
हम आगे की ओर जा रहे हैं
उसी रास्ते से लौटती आँधी
कुछ पल थम जाने पर
क्या हम पार कर सकेंगे
प्रथम मिलन के रक्तिम दिगंत को

क्या फिर हम लौट सकेंगे
प्रतिज्ञा के विदाई रास्ते में
द्विधाग्रस्त प्रथम सीमांत तक
जिसे हम छोड़ आये थे
एक साथ न बिताये दिनों में

सभी मुलाकातें परिचय नहीं होतीं
सभी वियोग विछोह नहीं होते

तो फिर क्यों
लौटती प्रतिध्वनियों में
हम समझने की कोशिश करें

स्मृतियों की कुछ सामान्य त्रुटियां
जिससे हम प्रवंचित हुए थे

शब्द

शून्य से निकला एक शब्द
अंतरिक्ष से होकर
आकाश को बींधकर
गिरि शिखर पर कौंध
पृथ्वी पर आ उतरा

बादलों के स्नेह से भीगे
हवा के झूले में
पेड़ों के असंख्य हाथों को छूकर
झरने में स्नान कर
ओस की बूंदों पर पैर रखते हुए
वह मेरे पास आया
कँटीली राहों से होकर
जंगलों में रहा भटककर
पत्थरों से क्षत-विक्षत

फिर मेरे अंदर समा गया
कहे जाने से पहले

वर्षा

असहाय दोपहर की छाया में
धूप स्वयं को समर्पित कर देती है
आकाश के सम्मुख
अधूरा दिन विलीन हो जाता है
बादलों की वयस्कता में
मेरी एकाग्रता की उपेक्षा कर

दु:ख से जर्जरित एक सपना
भीगा हुआ आकर खड़ा हो जाता है
बंद दरवाज़े के पास

हवा का झोंका आकर
अचानक मुझे सचेत कर जाता है
असमय अँधेरे के
घिर आते कूट प्रश्नों से

भ्रम दूर करने की घड़ियों में
मैं सिर्फ़ तकता रहता हूँ
बूँद बूँद बारिश की परिधि की ओर
छोटी छोटी जिज्ञासा लिए
आशा चली जाती है
प्रत्यय को छोड़कर

प्रतीक्षा

मैं उस समय तक तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा
जिसके बाद मेरी प्रतीक्षा
तुम्हारी आवाजाही से परे होगी

तुम चली जाओगी अंतरिक्ष की दूसरी ओर
समय को लाँघकर
रहस्य के कोमल गलीचे पर
नैसर्गिक संगीत पर पैर रख
सम्मोहन के झूले में
विस्मय के बादल पर बहती हुई
संपूर्ण उत्सुकता रहित
प्रतीक्षारत व्यक्ति के लिए
कोई कौतूहल छोड़े बिना

जब तुम मेरी प्रतीक्षा के
तटस्थ देश में आ पहुँचोगी
दूरी को हाथों में सहेजकर
मृत्यु का क्षमा-पत्र लिए
मैं स्वयं को संभालते हुए
आँखों के उद्वेग को वश में कर लूँगा

समय की स्पर्द्धा को देख
मैं प्रतीक्षा करूँगा
तुम्हारे बारबार लौट आने
और पुनः चले जाने की

साक्षी

हम समय के वंशज हैं
हमें पहचान सकते हो
केवल उत्तराधिकार के माध्यम से

हम वर्तमान के अवास्तविक चेहरे हैं
हम ऐसे अतीत हैं
जो घटित होने जा रहा है
हम ऐसे भविष्य हैं
जो भोगा जा चुका है

हम निर्वाक् साक्षी बनकर रह जायेंगे
हमारे भीतर से होकर
समय के सारे प्रश्न गुजर जायेंगे

ॠतु

तुमने मुझे
जो सवाल भरा पत्र लिखा था
उसके शब्दों की विषण्ण हँसी ने
जाड़े के कोहरे की तरह
बसंत को दूर ही रखा

उसके बाद केवल
निर्लिप्त समय का धूसर राजत्व
जाड़ा नहीं बंसत नहीं
हैं केवल निर्वैयक्तिक
शब्दों के मेल से बने
कृत्रिम दिन

मेरे सारे दिन बिखर गये
नन्हें नन्हें क्षण बनकर
कागज़ की तरह उड़ गये
अवर्तमान की ॠतु की ओर

शहर

सुबह अपने को सामने लायेगी
तह-तह करके खुल जायेगा अंधेरा
सायरन का रंग छा जायेगा
चिमनी के धुएं से धूसर आकाश में

कार्पेट की तरह रास्ते खुल जायेंगे
बिजली के तार रास्ता बदलकर
खुले फाटक तक पहुँच जायेंगे

टुपुर टुपुर बारिश की कुछ बूँदें
कदमों की आहट का अनुसरण कर
पोर्टिको तक पहुँच जायेंगी

लिफ़्ट का दरवाज़ा खुल जायेगा
और फिर बंद हो जायेगा
मेरे आविष्कार को निगलकर

फुटपाथ पर खड़े हो
मैं अपनी आँखों की सुदूर इच्छाएं
खो दूँगा
अनिवार्य शिष्टाचारों से होकर
शहर की भीड़ के वीराने में

विकल्प

मैं जो कुछ देख रहा हूँ
वह तुम्हारा चेहरा है
जिसे मैं पहचानता हूँ
अथवा तुम्हारे चेहरे से होकर गुज़रती
अनेक इच्छाओं की आकृति

मैं जो कुछ सुनता हूँ
तुम्हारी कही बातें हैं
अथवा प्रत्येक शब्द में निहित
विभिन्न समयों की द्वयर्थक ध्वनियाँ

तुम्हारे बारे में जो कुछ याद है
वे सब घटित हुई थीं
अथवा मेरे सभी अनुभवों को
एकत्रित करने वाली
मात्र सहृदय रूपकथा थी

कभी तुम्हें चाहना
क्या वास्तव में तुम्हें चाहना था
जो तुम्हारा संपूर्ण समर्पण
और मेरा बिना शर्त स्वीकार था
अथवा मेरी चौहद्दी में

वह था तुम्हारा अंदर से बाहर
अनायास आना और जाना
मुझ पर अप्रैल द्वारा उंड़ेली
ऋतुओं का हार्दिक आशीर्वाद
एवं इन्द्र धनुषों के साथ
मेरे सारे सामयिक समझौते

अस्वीकार

हमने आँखों के वार्तालाप को
स्वीकार नहीं किया
हाथों के समझौते को
हमने अस्वीकार कर दिया
हम नहीं ले पाये
समर्पण की चाह रखने वाले
गंभीरतम आस्था और विश्वास

होंठों से निकलती शुभकामना
आगे की ओर बढ़ता हाथ
आश्रय ढूँढ़ता हाथ
आश्रय ढूँढ़ता शरीर
हम नहीं ले पाये
निर्भ्रम होंठों से आश्वस्त मुट्ठियों में
शरीर के उच्छ्वसित आग्रह में

हमने अतीत को स्वीकार नहीं किया
किंतु वर्तमान के साथ दुराव करके
भविष्य को पीछे छोड़ आये

कम से कम

कम से कम इतनी बातें कहो
जिससे निस्तब्धता कम हो सके

कुछ इतना सामीप्य
जिससे दूरी को स्वीकार कर सकें

थोड़ी सी संवेदना
जिससे विस्मृति का सामना कर सकें

कुछ पल का
मिलन
जिससे वियोग को स्वीकारा जा सके

इतनी प्रतीक्षा दे जाओ
जब तक तुम न आओ
और मुझे स्वीकार न करो

स्वयं अपने को

अपनी आत्म-कथा के पन्नों से होकर
मैं अपने पास लौट आऊँगा
एक के बाद दूसरा कदम
अर्थी से गर्भाशय तक
पदचिह्नों से नया रास्ता बनाता

अपने ही भय को तलाश कर
मैं ख़ुद का पुनः आविष्कार करूँगा
प्रागैतिहासिक अंधकार की निष्कपटता में
मैं अपना अभिषेक करूँगा
अपने विरुद्ध स्वयं
कठोर युद्ध में विजय पाकर
आत्म-तोष के धुंधले समारोह में

विरोधी प्रतिवचन के बुरे लग्न में
अपनी सृष्टि में स्वयं-सम्पूर्ण
अपने नकारात्मक व्यक्तित्व से होकर
तमाम दायित्वों और माँगों को
पूर्व पुरुषों और उत्तराधिकारियों के हाथों
क्रमशः सौंप देने के बाद
मैं पुनः अपने
लौट आने की प्रतीक्षा करूँगा
एक के बाद दूसरा कदम

स्वागत

अपने होंठों की रक्तिम हँसी के अलावा
तुम और कोई गुलदस्ता नहीं लायी थीं

लौटती परछाइयों के
अप्रत्याशित अभिवादन से पहले
तारों के उस पार
सारी एकाग्रता बिखर जायेंगी

स्वयंसिद्ध पश्चात्ताप
अबाधित रह जायेंगे
तुम्हारी आँखों के शिखर पर

स्वागत को उद्धत सूर्यमुखी
नवजात के लिए समर्पित
सूर्य को देखे बिना
तुम्हारी ओर ताकेगी
सारी पंखुड़ियाँ झड़ जाने तक

मौत से गुज़र कर लौटने के बाद
तुम किस समय आँखें खोलोगी
अपनी हँसी की आकस्मिकता में

तुम्हारा लौटना

तुम्हारी लौटती यादें जब
एकाकी मंत्रध्वनि की तरह
मुझसे मिलने आयेंगी
आधी रात को किसी भी क्षण

तुम रास्ता बदलकर चली जाओगी
तुम पार कर जाओगी
अनुच्चारित शब्दों के टूटे पुल
विषाद को अपने जूड़े में सजाकर
जन्म दिन की फूलमालायें हाथों में लिए

मैं प्रतीक्षारत रहूँगा तुम आओगी जब
अकाल के आकाश में अचानक बादल बनकर
अँधेरे के सदाव्रत में
हंसी की भर भर मुट्ठी धूप बाँटकर

किंतु तुम लौटोगी
ध्वनि तत्व से टकराकर
अतुकांत छंद से चोट खाकर
तुम लौटोगी
प्रेम कविता की आलोचना से गुज़रकर
साहित्य उत्सव के समारोह से होते हुए

ऋतु के उतावलेपन को
ध्वनियों में समेट कर
मैं कुछ और शब्द छींट दूँगा
फिर लौट आऊँगा अपने
हृदय के सहज रास्तों पर
प्रतीक्षा के अंत तक
जो एक पहेली बन चुकी होगी

रास्ते

तुम आधी रात की सनसनी भरी हवा हो
जो अकेले राही के रास्ते को
भयावह कर देती है

तुम अँधेरे में हाथ का हाथ को छूना हो
जो मील के पत्थर की लंबी साँस की तरह
सारी दूरियों को पाट देता है
अंतरिक्ष के शून्य आतंक से

तुम अस्थिर ध्रुवतारा हो
जिसकी व्यस्त अँगुली का संकेत
रेगिस्तान की सामयिक लहरों को मिटा देता है
दलदल के आक्रोश से

मेरी उद्देश्यहीन यात्राओं की घड़ियों में
कदमों की चंचलता को
तुम चेतना में समेटे हुए हो
तुम हो, अँधेरी रात है
और अधिक सुनसान है
और भी लंबा है रास्ता

और अनेक रास्ते
और अनेक रास्ते

अपरिचय

कुछ क्षणों के बाद
जब हम आकाश के
अमूर्त चित्र से होकर
समर्थ उपत्यका के
निर्लिप्त समतल पर उतरेंगे

पहली मुलाकात की अपरिपूर्णता में
हम पुनः
अपरिचित हो चुके होंगे

उसके बाद हम
एक-दूसरे को और क्या कह सकेंगे
और किस अलौकिक
घटना की उम्मीद लेकर
यादों की सांख्यिकी के
और किस विस्मित क्रम से

विस्मृति

अब तुम लौट आओ
स्मृतियों के संसर्ग से मुक्त होकर

समय के अविभाज्य अंश
एक दूसरे से अलग हो.जाने पर
परिधि के प्रत्येक बिन्दु लौट जायेंगे
निर्धारित केन्द्र की ओर

आनेवाली रातों में
दोलायमान जीवन-मृत्यु के
ऐतिहासिक विकट क्षण
आलोकित हो जायेंगे

तुम लौट आती हो
अगाध निर्जनता के शिखर देश में
जहां एक अद्भुत स्थिरता
एवं तुषाराछन्न सूर्य का
शीतल विस्फोरण है

जो मृत्यु नहीं है मोक्ष नहीं है
है केवल एक निर्धारित उपसंहार

अनावरण

तुम्हारी नैतिकता की निष्काम संध्या में
आकाश में जो विशेष
रक्तिम रंग की यातना छा गयी
तुम्हारे शरीर में क्या उस यातना की
थोड़ी भी टीस नहीं फैली थी
सूर्य के उस अंतिम पश्चाताप में
क्या तुम्हारे चेहरे पर लालिमा नहीं छायी थी

उसके बाद तुम्हारी बंद आँखें
और थके हुए चेहरे पर
जो अलौकिक छाया तिर गयी
तुम्हारे आत्मसंयम के बावजूद
आँख की कोर में थोड़ी सी थर्राहट
भौंहों में थोड़ी लहरें
अधरों पर थोड़ी सिकुड़न पैदा कर

किसने तुम्हें अनावृत कर दिया
तुम्हारे व्यक्तित्व को अस्त-व्यस्त कर
किसका ऐकांतिक स्मरण
कौन था वह कैसा अतीत
किसका सूर्यास्त कैसे बादल
कौन सा प्यासा आकाश कैसी आँधी
किस शाम की फूलों भरी घाटी

जाड़े की रात

अभिशप्त दिन देर से आकर
जल्दी चला जाता है
कई तरह के संयोग से होते हुए

कोहरे के भीतर से
मकड़ी के जाले की तरह आकाश
अमूर्त और मौन पहाड़ पर
तारों की झिलमिल बारिश

पेड़ सभी उद्‌देश्यहीन
दु:स्वप्न से होकर
चूने लगती है
बूँद-बूँद दुश्चिंता

रात बेहोश पड़ी रहती है
आधी रात की सभी बत्तियाँ
नन्हें-नन्हें प्रकाश के वृत्त बन जाती हैं

दुर्घटनाएं सिमट जाती हैं
छोटी छोटी गहरी सच्चाई में

स्वयंसिद्धा

तुम एक सिरे से
प्रारंभ और शेष हो
एवं हो दोनों को जोड़नेवाला रास्ता

तुम अपनी हँसी से मुखरित गली हो
और अपनी रोशनी से
आलोकित झरोखे समेत
संपूर्ण शहर

काल और पात्र रहित
तुम ऐसे सूर्यालोक का देश हो
जहां बेखटके जाया जा सकता है
सिर्फ़ अँधेरी रात में

चांदनी रात

हाथ ने हाथ को छुआ
टटोलते हुए
आँख से आँख मिली
खोजते हुए

जब तक चांद
कुछ विचलित हुआ
अंतरिक्ष के सटीक मानचित्र
और नक्षत्र मंडल के
समन्वित नक्शे में

तुमने वापस ले लिए
समय को समर्पित
सारे आत्मविश्वास

पल झपकते सभी लौट गये
अपने-अपने कक्ष में
दूराश्रित तुम और मैं
एवं चांद का निर्मम उपहास

भूल जाना

रास्ता कभी राह नहीं भटकता
पथ भूल जाता है पथिक

सुदूर सूर्योदय तक जाते समय
पैर ठहर जाते हैं सपाट संध्या के
निर्लिप्त संभावनाओं में
समय की ऊपरी मंजिल में
शरणार्थी उम्र छटपटाती है

समय और दूरी भुलाते नहीं
भूल जाता है मन

समुद्र

समुद्र एक
अनंत अनुभूति की छवि है
जहाँ प्रतिबिंबित हो जाते हैं
मेरी चिंता के सारे निर्द्वन्द्व मूल्य

प्रत्येक घोंघे में
मुखर होता है उसका स्वर
प्रत्येक शंख से
निकलता है उसका निनाद

मेरी अनुभूति से परे
सारे अनुभव
लहरों में समा जाने पर
समय को समर्पित अपने सारे आत्मविश्वास
मैं वापस ले लेता हूँ

लक्ष्यच्युत दुःख के मुहाने पर
समय लौटा देगा
एक-एक करके
अनुभव के सारे प्रतिबिंब

युद्ध विराम

हे महाकाल की देवी
मेरे रोजाना के सुख दुख के
एकांत रण आँगन में
तुम अस्त्र ढूँढ़ सकती हो
शत्रु नहीं

मेरी प्रत्येक खुशी
एक न्यूनतर मौत है
और प्रत्येक शोक
एक अखण्ड आनंद का शेष अध्याय

मैं आत्म समर्पण कर लूँगा
तुम्हारी युद्ध घोषणा से पहले
जब तुम
उस खुशी और शोक को
निक्षेप कर दोगी
समय की अस्वीकृत दूरी तक

सराय

ऋतुएं समय पर
नक़्शा छोड़ जाती हैं
पृथ्वी बँट जाती है
अनगिनत कमरों में

रास्ता छोड़कर हम सब
घुस जाते हैं अपरिचित स्मृतियों के
व्यूह में

सारे पहले अतीत
संपर्क के अखंड वर्तमान में बदल जाते हैं
सब कुछ विलीन हो जाता है
निर्मम परिचय के विचित्र क्रम में

मूर्च्छावस्था में ही बीत जाती हैं
तर्क-वितर्क की लम्बी रातें
आगे का रास्ता दिखा देता है
अस्त-व्यस्त स्मृतियों के मील पत्थर

सूर्योदय

एक निरुद्धार रात के अंत में
मैं आकाश को देखता हूँ
भस्मीभूत तारों की
एक शीतल उपत्यका
और निर्वैयक्तिक संबंधों का विस्तार

जुलूस के बीच सूर्योदय होता है
छाया लम्बी हो जाती है
जेल का दरवाज़ा लाँघकर

दोहरे व्यक्तित्व कीं
एकांत जगहों पर
जम जाती है
आपसी संबंधों की निरालंब मुक्ति

मैं समझौता कर लेता हूँ
घनी निर्जनता से
आजीवन कारावास काटता कैदी
जिस तरह समझौता कर लेता है
जेल की दीवार के भीतर पड़ी
अपनी परछाईं से

और अंत में मैं अपने
सामर्थ्य को खो देता हूँ
घिरती सुबह के समारोह में

सापेक्ष

एक दूसरे से मुक्ति नहीं
हम इस तरह बार-बार मिलते रहेंगे
मिलन के फीके समारोह
और विदाई की सघनता में

सारे संपर्क
समान रूप से अक्षुण्ण रहेंगे
इकट्ठे होने
अथवा अलग रहने में

संशय के अंत तक
जब उद्वेग की परछायीं आकर
अविस्मृत द्विधाओं को पोंछ डालेगी

मेरी प्रतीक्षा के मूलमंत्र
जा चुके लोगों के
विभिन्न जन्मों का उदासीन ज्ञान
मेरी अखण्ड आस्था का प्रमाण
मेरी आत्मकथा

और मेरा अभ्यस्त धैर्य

क्षण

समय को रंग दे जाती है
ज्ञान से मिली अनुभूति नहीं
प्रस्तुति रहित तात्कालिक प्रवृत्ति

जीवन को अर्थ से भर देती हैं
अनंत काल की जिज्ञासाएं नहीं
छोटी–छोटी वर्तमान की उपलब्धियां

मैं नित्य वर्तमानता से लौटा लेता हूँ
अपनी समस्त सीमित इच्छाओं को
जीवन की सूनी जगहों में
मैं पुन: सजा देता हूँ
छोटी-छोटी घटनाओं को
एक सहज तात्कालिकता में

देवी

तुम्हें देखते समय
मुझे डर लगता है
कहीं मैं आस्तिक न हो जाऊँ

बारिश की शाम

दोपहर की बारिश के अंत में
एकाएक सारा कुछ थम जाता है कुछ क्षणों तक
समय को देखते हुए

आकाश का अनभ्यस्त हाथ आकर
बाध्य करता है इंद्रधनुष की कोमल वक्रता को
सूर्य के मरणासन्न शरीर को
ग्रास कर लेती है गोधूलि की धृष्टता

बादल फिर घिर आते हैं
अँधेरे की सघनता तक
बारिश के अनगिनत हाथ उतरकर
हमें फेंक देते हैं
न कट सके समय की
भयानकता की ओर

माध्यम

मेरे आत्म निरीक्षण के
धार्मिक क्षणों में
तुम रास्ता रोके खड़ी होगी
देवताओं के लौटते रास्ते पर

तुम्हारी आँखों में प्राचीन श्लोकों की आवृत्ति
तुम्हारी साँसों में धूप और चंदन
तुम्हारे वातावरण में आरती की घंटियाँ
बजने से पहले ही सहमी हुई स्थिति
तुम्हारे चेहरे पर धर्मशास्त्र के सारे क्रोध

मैं मंदिर की छाया में
आसन लगाये बैठा रहूँगा
अपनी प्राचीन भक्ति में
तुम्हारे शरीर से होकर
देवता चले जायेंगे
अपने-अपने अमरत्व की ओर

आवेश

तुम्हारे लौटने की प्रतीक्षा में
हृदय से बाहर निकल आते हैं आवेश
तुम्हारे स्वागत के लिए

प्रतीक्षा के व्यर्थ मध्यांतर के बाद
जब दिन पुन: राह भूलकर
चला जाता है यादों के सीमांत पर

आवेश अधरों तक आकर
स्वर और व्यंजनों को छूने से पहले
लम्बी आह में बदल जाते हैं

मन

आकाश हमेशा एक-सा नहीं रहता
हमने जिस आकाश को देखा था
वह आकाश अब नहीं हैं
बादल और नक्षत्रों ने
अपने को सजा लिया है
एक भिन्न विन्यास में

तैरते चतुर्थ विस्तार में
आँख और तारों में कोई घनिष्ठता नहीं
जहाज़ किनारे लग जाता है निषिद्ध द्वीप के
अनगिनत चिंताएँ हमें छुए बिना
कागज़ से होकर उतर जाती हैं

उल्लसित उम्र की हँसी में
मन सिर्फ़ एक स्मारक है
स्मृति स्तंभ के पास रख जाता है
साल के निर्धारित दिनों में
ताज़े फूलों का एक–एक गुलदस्ता

निर्जनता

वर्णमाला के सारे
स्वर और व्यंजन
चुक जाने के बाद
शब्द दे गया
झूठे आश्वासन
और मनमुटाव
संज्ञाओं से बाहर
अक्षर सारे मुरझा जाने तक

उसके बाद शब्द
दैवी शक्ति-संपन्न नहीं रहता
क्योंकि जहां निर्जनता का
साम्राज्य फैल जाये

वहां एक अलग परिभाषा है
निस्तब्धता की

शैशव के रास्ते

भटके हुए सारे रास्ते
नक़्शा खींच जायेंगे
याद आते शहर के अस्पष्ट शरीर पर

रास्ते का आक्रोश याद दिला देगा
सहज संबंधों की

बंद और निषिद्ध इलाकों में
रास्ते का आलोकित हाथ बढ़ जायेगा
झरोखे के अंतराल से
भूले हुए चेहरे को छूकर

रास्ता आगे बढ़ जायेगा
संगीत की अंतिम लहर की तरह
सारे नाम समा जायेंगे
मौलिक ध्वनियों में

बीता हुआ कल वचन दे जायेगा
आज की शोक को

सारे शहर को ढँक लेगा
शैशव का रास्ता

सब समझ में आता है

सब कुछ समझ में आता है
जो कुछ लिखा होता है
आदि मध्य और अंत रहित
आत्मनिरीक्षण की सजल शून्यता में

सारी मृदु भर्त्सना
सारे स्पष्ट शोक
सारे निर्विघ्न क्रोध
सारे अबोध भय

सब कुछ समझ में आता है
कभी पहले और कभी बाद में
धूप में जले हुए युग
बादल में ढँके देवत्व
कोहरे में लौटते पुण्य

विकलांग पश्चात्ताप
स्थिर होकर रह जाते हैं
निष्फल प्रतिध्वनि की अद्‌भुत मुद्राओं में

अकेली लड़की

छत पर सुबह की धूप छितराते ही
अकेली लड़की पेड़ की छाँव में बैठ जाती है
नदी किनारे किसी की प्रतीक्षा में

नदी की सदिच्छाएं समुद्र तक फैल जाने पर
लहरों के उत्सुक हाथ बढ़ाकर
समुद्र के आकाश को छूने पर
आकाश के आलिंगन शून्य में समा जाने पर
प्रेमी अपनी
आँखों की दूरदृष्टि को सजा लेते हैं
न जाने क्या सोचकर किस चिंता से

झरोखे से छाया उतरने पर
छोड़ आये प्रियजनों के लिए
तनिक भी विमुख न होकर
आँख बंद कर शून्य की ओर मुँह उठाकर
फिर से अपने ही अंदर कौन खो जाता है
शाम होने पर नदी किनारे

रूपांतर

तुम्हारे चेहरे के दर्पण से
कुछ भी पाना
संभव नहीं
न स्पर्श, न वर्ण, न गंध

केवल उसमें देखना संभव है
सारा कुछ अतार्किक रूप से
रूपांतरित हो जाना

आकाश-गंगा

जब तुम
मेरे मन के कोलाहल से
निकलकर चली जाओगी
एक अन्य आकाश-गंगा पर
तारे चुप हो जायेंगे

मैं पुनः निर्वाक् रह जाऊँगा
तुम्हारी अपार्थिक निर्जनता में
तल्लीन हो जाने के लिए

चिंता की ओट में

छिपे रहते हैं शब्द
काले काले मुखौटों में मुँह छुपाये

बाहर की ओर पैर बढ़ाते हैं
सुबह का स्वागत करने के लिए
निर्दयी धूप सोख लेती है
उनकी रक्तिम लज्जा

शब्द सिर झुकाये लौट जाते हैं
बिना खिड़की के बंद कमरों में

बारिश की रात

इस तरह कभी कभी
बारिश में भीगी घास के फूलों की
खुसुर-पुसुर बातों से
आधी रात को यदि नींद उचट जाती है
और फिर नींद नहीं आती

सपनों के सारे भग्नांश
जो उनींदी रात की घनिष्ठता नहीं हैं
अचानक खो जाते हैं
आँखों में बूँद-बूँद आँसू छोड़कर

अप्रतिम रात्रि अपनी
काली पोशाक खोलकर रख देती है
बारिश क्रमशः सरकती जाती है
अस्पष्ट होते शब्दों की तरह
संतप्त सवेरा आता है
अपराधी सिर झुकाकर

आँखें बंद रहती हैं
क्षितिज के पार व्याप्त
किसी और एक करुणा के बादलों से
ठंडी हवा आकर
बूँद-बूँद आँसू को पोंछ लेती है

अंत

हम हँसी छोड़ आये
बीच रास्ते की शून्यता में

सबकी आँखें समुद्र पर टिकी रहीं
धूमकेतु रास्ता बदलकर चला गया

एकाकी पेड़ का हाथ बढ़ गया
आकाश की ओर
पीछे सरक गया जंगल

द्वीप अज्ञात रह गये
हवा उड़ा ले गयी सारे सपने

रणक्षेत्र सुनसान है
किसी की भी आँखों में आँसू नहीं

जगन्नाथ प्रसाद दास

जन्म 1936, उड़ीसा में। उड़िया के सुप्रसिद्ध कवि, नाटककार और कहानीकार हैं। इनकी रचनाएं भारत की विभिन्न भाषाओं में अनूदित और प्रकाशित हो चुकी हैं। हिन्दी में प्रकाशित कृतियां: **प्रथम पुरुष**, **कई तरह के दिन**, **अपना अपना एकांत** (काव्य-संग्रह), **सूर्यास्त**, **सबसे नीचे का आदमी**, **असंगत नाटक**, **एक दूसरे के लिए** (नाटक) हैं। आधुनिक भारतीय नाटकों में **सूर्यास्त** को क्लासिक के रूप में स्वीकार किया गया है। इनके नाटक रेडियो और दूरदर्शन से प्रसारित हुए हैं। इनका मराठी, बंगाली, गुजराती, मलयालम, कन्नड़ और तमिल भाषाओं में अनुवाद तथा देश के विभिन्न शहरों में सफल मंचन भी हुआ।
कला इतिहास में पी.एच.डी। होमी भाषा फैलोशिप के अंतर्गत उड़ीसा की चित्रकला पर इन्होंने एक पुस्तक लिखी है।
साहित्य व कला के अलावा फिल्मों में भी गहरी रुचि। राष्ट्रीय फिल्म समारोह व अंतर्राष्ट्रीय बाल फिल्म समारोह के ज्यूरी मेंबर रह चुके हैं।

संप्रति, दिल्ली में रहकर स्वतंत्र लेखन तथा विभिन्न साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में संबद्ध।

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञान की विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्री का अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोक-हितकारी मौलिक-साहित्य का निर्माण

•

